

Vol 3 Issue 5 Nov 2013

Impact Factor : 1.9508 (UIF)

ISSN No :2231-5063

Monthly Multidisciplinary Research Journal

Golden Research Thoughts

Chief Editor
Dr.Tukaram Narayan Shinde

Publisher
Mrs.Laxmi Ashok Yakkaldevi

Associate Editor
Dr.Rajani Dalvi

Honorary
Mr.Ashok Yakkaldevi

IMPACT FACTOR : 1.9508 (UIF)

Welcome to ISRJ

RNI MAHMUL/2011/38595

ISSN No.2230-7850

Indian Streams Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial Board readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

International Advisory Board

Flávio de São Pedro Filho Federal University of Rondonia, Brazil	Mohammad Hailat Dept. of Mathmatial Sciences, University of South Carolina Aiken, Aiken SC 29801	Hasan Baktir English Language and Literature Department, Kayseri
Kamani Perera Regional Centre For Strategic Studies, Sri Lanka	Abdullah Sabbagh Engineering Studies, Sydney	Ghayoor Abbas Chotana Department of Chemistry, Lahore University of Management Sciences [PK]
Janaki Sinnasamy Librarian, University of Malaya [Malaysia]	Catalina Neculai University of Coventry, UK	Anna Maria Constantinovici AL. I. Cuza University, Romania
Romona Mihaila Spiru Haret University, Romania	Ecaterina Patrascu Spiru Haret University, Bucharest	Horia Patrascu Spiru Haret University, Bucharest, Romania
Delia Serbescu Spiru Haret University, Bucharest, Romania	Loredana Bosca Spiru Haret University, Romania	Ilie Pinte, Spiru Haret University, Romania
Anurag Misra DBS College, Kanpur	Fabricio Moraes de Almeida Federal University of Rondonia, Brazil	Xiaohua Yang PhD, USA
Titus Pop	George - Calin SERITAN Postdoctoral Researcher	Nawab Ali Khan College of Business Administration

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India	Iresh Swami Ex - VC. Solapur University, Solapur	Rajendra Shendge Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur
R. R. Patil Head Geology Department Solapur University, Solapur	N.S. Dhaygude Ex. Prin. Dayanand College, Solapur	R. R. Yalikal Director Managment Institute, Solapur
Rama Bhosale Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel	Narendra Kadu Jt. Director Higher Education, Pune	Umesh Rajderkar Head Humanities & Social Science YCMOU, Nashik
Salve R. N. Department of Sociology, Shivaji University, Kolhapur	K. M. Bhandarkar Praful Patel College of Education, Gondia	S. R. Pandya Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai
Govind P. Shinde Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai	Sonal Singh Vikram University, Ujjain	Alka Darshan Shrivastava Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar
Chakane Sanjay Dnyaneshwar Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune	G. P. Patankar S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka	Rahul Shriram Sudke Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore
Awadhesh Kumar Shirotriya Secretary, Play India Play (Trust),Meerut	Maj. S. Bakhtiar Choudhary Director,Hyderabad AP India.	S.KANNAN Ph.D , Annamalai University,TN
	S.Parvathi Devi Ph.D.-University of Allahabad	Satish Kumar Kalhotra
	Sonal Singh	

**Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.net**



संचार माध्यमों में हिन्दी भाषा की प्रकृति



कला जोशी

प्राध्यापक हिन्दी, अटलबिहारी वाजपेयी शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
इंदौर (मध्यप्रदेश)

सारांश: परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी प्रारंभ से ही संचार के साधन रहे हैं । परा, पश्यन्ती और मध्यमा संचार के अत्यन्त सूक्ष्म गुह्य स्तर हैं । देखरी ही वह वाणी है जिससे मनुष्य बोलते हैं । आज वैश्वीकरण और गंडीकरण ने संचार के सूक्ष्म स्तरों को भी विशिष्ट बनाकर पेश कर दिया है । प्रिंटमीडिया एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया इसी की देन है । उसने संचार के क्षेत्र में क्रांति कर दी है । बीसियों चैनल अपना साम्राज्य विस्तृत और व्यापक करते रहे हैं । 21 वीं सदी तक आते-आते संचार माध्यमों ने वो ऊँचाई पाई है कि वैश्वीकरण के तले दुनिया का मंडीकरण होता जा रहा है । इस मंडीकरण को वैश्विक प्रचार दिया है मीडिया ने । मीडिया बाजार की आवश्यकता है और हिन्दी मीडिया की । हिन्दी की जबरदस्त मांग के चलते उसे रोमन लिपि में लिखने की शुरुआत कर ग्लोबल भाषा बनाने का सपना विश्व देख रहा है ।

जब ज्ञान, सूचना और भाषा को साधने में विश्व लगा हो तब भारत और उसकी भाषा हिन्दी भी पीछे क्यों रहे ?हर संभव प्रयास किये जा रहे हैं कि ज्ञान, सूचना और भाषा पर स्वामित्व किया जाए, क्योंकि जिस भी देश, समाज और व्यक्ति के पास ये तीनों हथियार हैं, वह निश्चित ही विश्व का सबसे शक्तिशाली धड़ा होगा । वही चौधराहट भी करने के काबिल होगा । जब से समाज में सूचना के विभिन्न संजालों का फैलाव व दबाव बढ़ा है, जबसे इलेक्ट्रानिक माध्यमों ने खासकर दूरदर्शन ने अपनी विराट और निर्णायक उपस्थिति दर्ज की, जबसे भारत तेजी से सैटेलाईट युग में प्रलित हुआ है, तबसे सूचनाओं का भूमण्डलभर में आदान-प्रदान हुआ है । इसके फलस्वरूप हमारी निष्कंप स्थानीयता, प्राथः सुरक्षित राज्य-राष्ट्र, उसके अन्य संस्थान तथा समाज के भीतरी संस्थान-परिवार रिश्ते आदि इस भूमंडलीयता की बाहर एवं भीतर सक्रिय पूंजी की चपेट में आकर अपनी पवित्र, शुद्ध, स्वात्मनिर्भर सीमाओं को दरका बैठे हैं । इससे हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के बौद्धिकों में बेहद व्याकुलता और आत्मभर्त्सना नजर आती है । परन्तु उनकी यह अकुलाहट व्यर्थ है क्योंकि जब विश्व बाजार में तबदी होगा तो भाषा भी उसका एक अंग होगी । व्यावसायिकता में शुद्धता और अशुद्धता का भाव और बहस व्यर्थ होगी । पेशेवर भाषा होने से हिन्दी का अपना तथाकथित निकम्मापन भी नष्ट हो जायेगा वह भविष्य में हिन्दी के लिए शुभ होगा ।

इस शोध पत्र में विभिन्न संचार माध्यमों में विशेषकर दूरदर्शन में व्यवहृत हिन्दी को अपने परम्परागत भाषिक बन्धों को तोड़ते हुए वैश्विक होने की दिशा में अग्रसर होते दिखाया गया है ।

प्रस्तावना:
चत्वारि वाक् पारमिता पदानि
ते विदुः ब्राह्मणा ये मनीषिणः
त्रीणी गृहां निहिता नेययति
चतुरीय वाक् मनुश्या वदन्ति ।

वैदिक काल से ही परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी संचार साधन रहे हैं । ऋग्वेद में वाणी चार स्तरों में निबध्द है । परा, पश्यंती, मध्यमा और वैखरी अर्थात्, आत्मा, अन्तश्चेतन, बुद्धि और वाणी के द्वारा संचार होता है । लेकिन पहले तीन स्तर अत्यंत सूक्ष्म और गुह्य निहित हैं, जो दुर्गम के साथ-साथ दुर्भाश्य भी हैं । चतुर्थ वैखरी वह वाणी है, जिससे सभी मनुष्य बोलते हैं । लेकिन संचार प्रथम तीन स्तरों से अविज्ञान होने पर भी अनेक योगी, मैसमिरिज्म, हिप्नोटिज्म द्वारा टेलीपैथी के ऐसे अनेक प्रयोग करते हैं जिनका संप्रेक्षण और सम्प्राशण ही दुर्लभ नहीं वरन उनका विश्लेषण भी कठिन है । ईश्वर ने मानव को वाणी और बुद्धि से इतना समृद्ध किया है कि वह सूक्ष्म संचार माध्यमों से संतुष्ट न रहकर स्थूल संचार माध्यमों से ही अपनी विशिष्टता दिखाता है । देशकाल की दूरियों को कम करने के उसने निरन्तर प्रयास किये । इन प्रयासों ने वैश्वीकरण और मंडीकरण की धारणाओं को विकसित किया और संचार माध्यमों का द्रुतगति से विस्तार-प्रसार हुआ है प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रानिक मीडिया इसी की देन है । प्रिंट मीडिया में समाचार पत्र-पत्रिकाएं प्रमुख हैं, इसी में ई-मेल और ई-कामर्स भी हैं । इलेक्ट्रानिक मीडिया का प्रमुख साधन दूरदर्शन है । इसने संचार के क्षेत्र में क्रांति कर दी है । बीसियों चैनल लगातार जनसंपर्क बढ़ाते जा रहे हैं । भारत में ऐसे चैनलों में से अधिकतर की भाषा हिन्दी है । यद्यपि राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, संगीत, मनोरंजन, संस्कृति और खेल से संपृक्त चैनलों पूरा करना पड़ रहा है, क्योंकि भारत में आज भी हिन्दी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसे प्रायः सभी भारतवासी समझते हैं इक्कीसवीं सदी तक आते-आते संचार माध्यमों ने वो ऊँचाई पाई है कि वैश्वीकरण के तले दुनिया का मंडीकरण होता जा रहा है । इस मंडीकरण को वैश्विक प्रचार दिया है मीडिया ने । मीडिया बाजार की आवश्यकता है और हिन्दी मीडिया की ।

जब ज्ञान, सूचना और भाषा को साने में विश्व लगा हो तब भारत और उसकी भाषा हिन्दी भी पीछे क्यों रहे ?हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं कि ज्ञान, सूचना और भाषा पर स्वामित्व किया जाए, क्योंकि जिस भी देश, समाज और

व्यक्ति के पास ये तीनों हाथियार हैं, वह निश्चित ही विश्व का सबसे शक्तिशाली धड़ा होगा । वही चौधराहट भी करने के काबिल होगा, जब से समाज में सूचना के विभिन्न संजालों का फैलाव और दबाव बढ़ा है, जबसे इलेक्ट्रानिक माध्यमों ने खासकर दूरदर्शन ने अपनी विराट और निर्णायक उपस्थिति दर्ज की है, जबसे भारत तेजी से सैटेलाईट युग में प्रलित हुआ है और ग्लोबलाइजेशन की चपेट में है, तबसे सूचनाओं का भूमंडलभर में आदान प्रदान हुआ है । इसके फलस्वरूप जबसे हमारी निष्कंप स्थानीयता, प्रायः सुरक्षित राष्ट्र-राज्य, उसके अन्य संस्थान तथा समाज के भीतरी संस्थान-परिवार, रिश्ते आदि, इस भूमंडलीयता की उससे जुड़ी और भीतर सक्रिय पूंजी की चपेट में आकर उनकी पवित्र, शुद्ध स्वात्मनिर्भर सीमाएं दरकी हैं, गडबडाई हैं, तबसे हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के बौद्धिकों में बेहद व्याकुलता और आत्मभर्त्सना नजर आती है । परन्तु उनकी यह अकुलाहट व्यर्थ है, क्योंकि जब विश्व बाजार में तबदील होगा तो भाषा भी उसका एक अंग होगी । व्यावसायिकता में शुद्धता-अशुद्धता का भाव और बहस व्यर्थ होगी । पेशेवर भाषा होने से हिन्दी का अपना निकम्मापन भी नष्ट हो जायेगा वह भविष्य में हिन्दी भाषा के लिए शुभ होगा ।

प्रत्येक देश, संस्कृति और समाज की भाषा के शब्द कुछ विशिष्ट तेवर, विशेष भंगिमाएं और जीवन-संस्कृति-संस्कार जे जुड़े हुए अर्थों को लिए होते हैं । इन अर्थों का संप्रेषण वहाँ की भाषा संवेदनाओं — संस्कारों से जुड़े हुए शब्दों द्वारा ही संभव है, आयातित शब्दों से नहीं । इन विशिष्ट तेवर भावर भंगिमाओं और अर्थों से जुड़ी हुई भाषा ही सही अर्थों में संचार सार्थकता रखती है । जीवन वहन अर्थ में ही नहीं वरन जीवन संचालन अर्थ में भी उसकी अहम भूमिका है । संवेदना संदर्भ में भाषा संचार पर विचार करते हुए सूर्यप्रसाद दीक्षित लिखते हैं — संचार भाषा के लिए आवश्यक है कि हम शब्द-शब्द से जुड़ी भाषिक संवेदना को पहचाने विशेषरूप से भाषा में जो मूडस, वक्रता, विदग्धता, नजाकत और भंगिमा होती है, उसको हृदयगम करें, यह भी अपेक्षित है कि हम प्रतीकों, आद्यबिम्बों, मिथकीय कूटपदों और गूढार्थों का सही अर्थोद्घाटन करें. ताकि सृजन और अर्थापन में कोई अंतराल न आने पाए । पुनः भाषा संचार को कर्म से जोड़ते हुए लिखते हैं, “ आज बड़ी-बड़ी रैलियाँ होती हैं, मीडिया पूरी ताकत झोंक देता है, किन्तु आम आदमी किसी के निर्देशों से प्रेरित नहीं हो पाता, क्योंकि इन निर्देशों के पीछे कर्म की शुचिता नहीं और इसलिए भी कि शब्दों में संवेदना नहीं उतर पाई ।”

किसी भी देश—समाज की संचार भाषा वहाँ की संवेदना को वहन करने वाली भाषा ही हो सकती है । इसी से जनसंचार संभव हो सकता है । जो भाषा विदेशी, आयातित संस्कार—संवेदना के लिए होगी वह कदापि संचार भाषा नहीं बन सकती । भाषा की सार्थकता संवेदनाओं को वहन करने में ही हो सकती है, और संवेदना शिक्षित अशिक्षित, साधारण—विशिष्ट की न होकर सुख—दुख, उल्लहास—उत्साह की गहराई से जुड़ी होती है ।

अनुभूति की तीव्रता और संवेदना की गहराई को व्यक्त करने में जो भाषा जितनी सक्षम होगी, वह संप्रेषणीयता में भी उतनी ही सहज होगी । भाषा के विकास का प्रतिमान भी यही है कि वह सूक्ष्म से सूक्ष्मतर संवेदना को सहज ही सम्प्रेष्य बना सके । फिर चाहें उसका रूप स्वदेशी—विदेशी अथवा व्यापरिक क्यों न हो । जिस जनसमूह पर उसे लागू होना हो उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । हर भाषा की एक सांस्कृतिक छटा होती है, जिसका सीधा सरोकार उसके आस्वाद से होता है , जैसे जीभ पर रखे गुड़ की मिठास के आस्वाद के लिए किसी पैरवीकार या दलाली कोश की आवश्यकता नहीं होती उसी प्रकार से माँ के दूध और गोद से मिली हुई भाषा के सम्प्रेषण में भी रूकवट नहीं आती । वह गुड़ की भेली की तरह जीभ पर आते ही किसी कम्प्यूटर की तरह दिलो—दिमाग के तहखानों में स्मृतियों—अनुभवों के न जाने कितने चोर दरवाजे खुद—ब—खुद खोलना शुरू कर देती है । इसको किसी के साथ बाँटा नहीं जा सकता । भाषा की यह सांस्कृतिक सापेक्षता ही उसकी सबसे बड़ी ताकत, सबसे बड़ी पहचान होती है । अतः भाषा को चखा और जिया तो जा सकता है, उसें कर वकालत नहीं की जा सकती । इसका मतलब भाषा की शुध्दता का आग्रह नहीं । बाजार के आग्रहों से तो भाषा फलती—फूलती और पनपती है और ग्राह्य शक्ति से वह जीवन बनती है, परन्तु भाषा जब संस्कृति से विलग हो जाती है, तो वह शब्दों का संवेदनहीन संग्रह मात्र रही जाती है । आज बाजारवाद के ऐसे चितेरे मीडिया के माध्यम से सिर्फ भाषा के ही नहीं बल्कि समूचे सांस्कृतिक संवाद को बेजान मलबे में तबदील करने की कोशिश कर रहे है । इससे भाषा में रचनात्मक अभिव्यक्ति के लिये आयाम लगातार सिमटता जा रहा है । भाषा का प्रचलित रूप शार्टकट और सतही और अंग्रेजीदा होता जा रहा है, जिसके अंतर्गत मीडिया से जुडा पूरे का पूरा व्यावसायिक तबका इन दिनों वैश्वीकरण की आड में भाषा की समूची सांस्कृतिक संलग्नता और विविधता को जड से उखाडकर उसकी जगह एक बेजान, यांत्रिक जुबान फिट करने की भयानक साजिश में जुटा है । जितेन्द्र भाटिया इस प्रवृत्ति में देसी भाषाओं की सांस्कृतिक पहचान के आमूल सफाए का मुकम्मल सौदा देखते हैं ।

आज हमारे संपूर्ण तन्त्र पर वैश्वीकरण आर्थिक उदारता के चलते बहुराष्ट्रीय कम्पनियां बुरी तरह हावी हो रही है । दृष्य माध्यमों का विस्तार आज सैंकड़ों चैनलों से हो रहा हैं । इनके द्वारा विकसित राष्ट्रों ने संचार तन्त्र और विज्ञापन शडयन्त्रो के माध्यम से अपने उत्पादों को बेचकर अधिकाधिक लाभ कमाने के उद्देश्य से विकासशील राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था को अपने नियंत्रण में ले लिया है । मीडिया के विज्ञापनों द्वारा वे अर्धविकसित देशों की जनता को सम्मोहित करने में लगे हुए हैं । हिन्दी को अपनाना इनकी बाजारु आवश्यकता है । इन्होंने थोडे ही समय में दिखा दिया कि विद्या, कला और संस्कृति सभी का एक मात्र उद्देश्य पैसा कमाना है । इनकी दृष्टि में श्लील—अश्लील, वैयक्तिक—सार्वजनिक, पुष्ट—अपुष्ट में कोई अंतर नहीं है । इस अंग्रेजीदां संचार तन्त्र में आर्थिक, राजनीतिक समाचार तो होते ही हैं, परन्तु यहां की लोकसंस्कृति से इनका कोई लेना—देना नहीं है । लेकिन यदि कहीं इनको लोकसंस्कृति का विवरण देना भी पड जाए तो भारत की असली आत्मा से अनभिज्ञ ये विश्वस्तर पर उसकी विकृत छवि ही दिखाते हैं । इसलिए इन्होंने महाकुंभ के अवसर पर दम लगाते साधुओं और स्नान करती अर्धनग्न स्त्रियों के चित्र तो धडल्ले से दिखाए परन्तु सिध्द—साधुओं की शास्त्र—चर्चाओं पर श्रध्दालु पर्यटकों से इनका कोई वारता नहीं रहा । मीडियाकर्मी दूरदर्शन पर इंटरव्यू लेते हुए, इंटीरोेटर और समाचार प्रस्तुत करते हुए, नकारात्मक दिखाई देते है । वह एक पक्षीय होकर अप्रिय घटनाओं को दिन भर दोहराते रहते है । वह दंगो का रसात्मक वर्णन करते हैं । विभिन्न समुदायों को संवेदनशील दृश्य दिखाकर भडकाते रहते हैं । सनसनीखेज प्रसंगों को छेड़ते रहते हैं । छवि हनन करना, डराना, धमकाना, दलाली करने के साथ—साथ माफियों का साथ निभाकर तहलका पैदा करना इनका अभीष्ट है । यह टी.व्ही. चैनल जान बूझकर घटना एवं दृश्यों को ऐसे कोणो और निकटता के साथ दिखाते है कि जिससे जनता तिलमिला उठे । राममंदिर के शिलापूज कार्यक्रम में एक सन्त के सम्भावित आत्मदाह को लेकर सारा देश चिन्तित था । किसी प्रकार मामला टल गया । एक टी.व्ही. चैनल ने इसका कार्यक्रम पलाप, टॉय—टॉय फिक्स शब्दावली में समाचार दिया । मानों सरयू का रंग लाल हो जाने से उसको संतोष होता । ऐसी दृश्य भाशा और टिप्पणियों अपराधी पत्रकारिता की श्रेणी में ही आती हैं ।

Impact Factor : 1.9508(UIF)

इस अपसंस्कृत भाषा को शहरों, कस्बों, गली—कूचों मोबाई फोनों और उपभोक्ता वस्तुओं की विशालकाय होर्डिंग्स से लेकर स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित फुटकर खबरों और टी.वी. के कुछ चैनलों पर सुबह—शाम प्रसारित होने वाले अंग्रेजीदां फिल्मी सितारों के तथाकथित हिन्दी साक्षात्कारों में प्रयुक्त होने वाली भाषा तक कहीं भी देखा जा सकता है । इंदौर शहर के एक अखबार में प्रयुक्त होने वाली भाषा का एक नमूना देखिए —

“ मॉनिंग ऑवर्स में ट्रैफिक को देखते हुए डिस्ट्रिक्ट एडमिनिस्ट्रेशन ने जो ट्रैफिक रूल को इम्पलिमेंट करने के एफ्टर्स लिए हैं, वे रोड को प्रोन टू एक्सीडेंट बना रहे हैं..... इरा प्रब्लम का इतिडिएट सोल्यूशन मस्ट है ।”

इसी प्रकार की समस्या हिन्दी शब्दों को रोमन लिपि में प्रस्तुत करने से भी आती है, जो मीडिया और खासतौर पर एम.एम.एस. में बहुव्यूहृत है । अंग्रेजी के बहुप्रचलित शब्दों को हिन्दी क्रियाओं रो जोडकर बनाई जानेवाली नई भाशा हिंग्लिश के पक्ष में भी हमारे यहां के तथाकथित बुध्दजीवी, सम्पादक एवं मीडिया के लोग अति सक्रिय है । इस संदर्भ में जितेन्द्र भाटिया कहते है — (दैनिक भास्कर का उदाहरण)— “ हर भारतीय माँ समझाती है कि उसके बच्चे का भविष्य और रोजगार का पासपोर्ट अंग्रेजी है.....हिंग्लिश के रूप में सम्भवतः हमने एक नई भाषा पाई है हिंग्लिश की समानता उर्दू से की जा सकती है मुस्लिम शासकों की भाषा उर्दू, फारसी और स्थानीय शब्दों को मेल से बनी है ।” इस सकरी भाषा को वह भाषाओं का फेशनेबल मिलन कहते हैं । इस जुबान ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के शडयन्त्री विज्ञापनों को..... लाइफ हो तो ऐसी, दिल मांगे मोर, ठंडा मतलब कोका कोला, संडे हो या मंडे रोज खाओं अंडे, ठंडा—ठंडा कूल कूल, कमर का दर्द नो लापरवाही आदि जुगलों से भले ही घर—घर तक पहुँचाने में सफलता हासिल कर ली हैं , परन्तु क्या यह हमारी दिलों में धडकने वाली प्राणवत्ता के साथ एक प्रकार का व्याभिचार नहीं हैं ? इससे अपनी पूरी संवेदना के साथ सही संदेश लोक जीवन को प्रभावित—संचालित करने में सक्षम हैं ?क्या यह भारतीय भाशिक संवेदना, मातृभाषा, लोकभाषा के साथ बलात्कार नहीं हैं?हम इनके माध्यम से क्या परोस रहे हैं ?इन विज्ञापनी जुमलों के साथ बन रही नई भाषा जो निम्न माध्यम वर्ग के सपनों को और उच्चवर्ग के ड्राइंग रूम की फैशनेबल भाषा कही जाती है क्या उसने शंकाओं का संसार और विश्वास का संकट नहीं खडा कर दिया ?क्या संचार माध्यमों की भाषादि को विकास का उद्देश्य विचारों, संवेदनाओं के आदान—प्रदान से एक विश्वसनीय समाज की संरचना करना नहीं हैं ?क्या आज इस संचार भाषा से भाशाई विकास के उद्देश्यों की पूर्ति हो रही है ?

जब एक व्यक्ति इन भाषायी जुमलों से प्रभावित होकर वस्तु को खरीद लाता है और घर आकर बतलाए—दिखाए गए वस्तु रूप से सर्वथा भिन्न, अप्रयोजनीय वस्तु को सामने पाता है तो अपनी जेब पर हुइ इस डाके के साथ—साथ उसके विश्वास को गहरा झटका लगता है । इन्ही जुमलीय विज्ञापन भाषा को दैनिक व्यवहार में प्रयुक्त होते देखकर भी उसका मन अपने साथ होने वाले धोखें की स्मृतिमात्र से भयभीत हो उठता है । वह प्रत्येक को शक की निगाहों से देखने लगा जाता है । उसको हर व्यक्ति लुटेरा नजर आने लगता है । फलतः वह इन सबसे विमुख होकर ठगा सा एकाकी बनकर संवेदनात्मक धरातल पर निर्वासित हो जाता है, मनोरोगी बन जाता है और धीरे—धीरे अनजाने में ही सामाजिक अपराधों का कारण बन बैठता है। इस प्रकार के हथकण्डे बहुत पहले सडकों के किनारे लगाए जाने वाले मजमों की धोखाधडियों की याद को भी ताजा कर देते है । अतः भाषा हमारी संवेदना को झाकझोरकर मनोवैज्ञानिक तौर पर हमें कहां से कहा पहुँचा देती है । यह अत्यंत विचारणीय हैं । आज मीडिया की हिन्दी न तो सामान्य बोलचाल की हिन्दी है और न ही सर्जनात्मक स्तर पर उपयोग में आने वाली काव्य भाषा । वह निजी और सार्वजनिक उपक्रम में प्रयुक्त होने वाली शुश्क राजभाषा भी नहीं है । संचार साधनों की हिन्दी अपने माध्यम विशेष के प्रति ईमानदार भाषा है । यह ईमानदारी कुछ उसी प्रकार से अनिष्टकारी और कुप्रभावी होगी, जैसी महाभारत काल में भीष्म की सिंहासन के प्रति ईमानदारी ने महाविनाश की भूमिका तैयार की थी । अतः हिन्दी को माध्यम विशेष के प्रति सतक रहने के साथ—साथ ईमानदारी केवल अभीष्ट के प्रति रखना चाहिए । और यह अभीष्ट है जनसामान्य की संवेदना, संस्कार और सांस्कृतिक विरासत । इस क्षेत्र में दूरदर्शन पर रामायण, महाभारत आदि सीरियलों नें उल्लेखनीय भूमिका निभाई है । इन्होने समस्त भारतीय जनता को ही नहीं वरन विदेशों में बसे भारतीयों को भी अपनी विरासत से जोडने का अभूतपूर्व कार्य किया । इस विरासत को सहेजना अत्यन्त जरूरी है यदि हम इसे खो बैठे तो फिर भाषा का विकास बेकार ही रहेगा । भाषा के पैरोंकारों को इस महती क्षति की ओर ध्यान देना होगा ! आज मीडिया के तथाकथित लोकतंत्र में हमने निम्न और मध्यम वर्ग की बोलचाल की भाषा तय करने की जिम्मेदारी भी प्राक्टर गैंबल, कोक—पैप्सी और अन्य के शातिर प्रवक्ताओं पर छोड दी हैं । आज यदि इनके शडयन्त्रों को पर्दाफाश करने की कोशिश भी कहीं होती है तो कोई भी संचार साधर उसको सुई की नोक भर भी स्थान देने को

तैयार नहीं होता, क्योंकि विज्ञापनों के सागर में कोई भी इन बहुराष्ट्रीय मगरमच्छों से बैर लेने की हिम्मत नहीं कर सकता । इन कम्पनियों द्वारा जाने वाले विज्ञापन ही उनकी कमाई का सबसे बड़ा जरिया होता है । इनके सामने भारत में अभिव्यक्ति की इतनी विवशता अंग्रेजों के समय में भी कभी नहीं रही थी अंग्रेजों की प्रभुता और अपनी दासता के समय भी हिन्दी इस तरह उपेक्षित नहीं थी । आज वह उधार के चमकीले कपड़े पहने बाजार में खड़ी हुई मानो अपनी बोली का इंतजार कर रही है और हर बोली लगाने वाला उस पर अपना भाषायी मैल छोड़ जाता हो । वस्तुतः इसकी पहचान, वास्तविक रंगरूप, गन्ध (भाषा के सन्दर्भ में संवेदना) ही लुप्त प्रायः होती जा रही है। वस्तुतः इस पहचान के रहते हुए यह वैश्विक मगरमच्छ गाँव-गाँव तक नहीं पहुँचा सकते थे । इसलिए उन्होंने पहले भाषा को तोड़मरोड़ कर अपने ईजाद किए हुए जुल्मों में कैद किया । जिससे हमारा सांस्कृतिक केन्द्र खुद-व-खुद ढहता जा रहा है ।

संचार मीडिया आज जिस भाषा का प्रयोग कर रहा हैं, वह भारतीय जनसंचार की भाशा नहीं है । किन्तु फिर भी जन साधारण उसे ढोने को विवश है । आज प्रचार-प्रसार के माध्यम इतने सशक्त हो गये है कि भाषा को रूप भी वही दे रहे है । कहीं भाषा समाज की वस्तु थी आज वह मीडिया की वस्तु बन गई है । वैश्वीकरण, और बाजारवाद के दबाव में संवेदना खो गई है । भाषा से विलगाकर उसने संप्रेषण और सूचना को महता दी है । आज जीवनतंत्रों से संचालित होता हैं हमारे दिलों-दिमाग पर यान्त्रिक भाषा का साया लगातार मंडराता रहता हैं संचार माध्यमों की आधुनिक भाषा अर्थात हिरिलश जनमानस की सम्प्रेषणीयता की भाषा नहीं बन सकती । इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण है कि कुछ वर्ष पूर्व हिन्दी चैनल जी. टी.वी. को समाचार बुलेटिनों में हिरिलश का प्रयोग करने की जुरंत में मुँह की खानी पड़ी थी । उसे पी.आर. टीस रेटिंग्स के दबावों के चलते अपने कदम पीछे हटाना पड़े थे । अर्थात भाषा की सांस्कृतिक-संवेदनात्मक सम्प्रेषणीयता का मसला न बदला है न बदलेगा । हिरिलश भले ही हमारी जीवन भाषा बनती चली जा रही है, परन्तु वह जीवन भाषा नहीं बन सकती । जीवन्तता के लिये हिन्दी का तदभवीकरण तो करना पड़ेगा, परन्तु विदेशीकरण नहीं ।

संचार साधनों में हिन्दी की स्थिति विषम है । इसका प्रभाव अन्य भारतीय भाषाओं पर भी पड़ा है । वर्तमान युग में तेजी से घटती हुई घटनाओं और बदलती हुई परिस्थितियों के कारण संचार साधनों की शिल्पगत उपलब्धियों का कोई विकल्प नहीं है , क्योंकि इन्होंने भाषा विचार संवेदना और अनुभूतियों को एक ऐसा अदभुत विस्तार दिया है कि देश और काल के मानक कहीं पीछे छूट ही नहीं गए, अपितु विलुप्त भी होने लगे है । भाषा प्रयोग के संबंध में संचार माध्यमों से ये तो अपेक्षा नहीं की जा सकती कि भाषा की साधुता एवं सुबोधता की रक्षा करने में वे आचार्यों की पंक्ति में खड़े हो, किन्तु अपने सम्प्रेषण में वे भाषाई अस्मिता को दरकिनार नहीं करें । डॉ. सत्यव्रत जी का एक महत्वपूर्ण कथन है कि “ जब तक भाषा का विद्यार्थी अपने शिक्षाकाल में रहता हैं तब तक उसे भाषा की व्याकरणिक शुद्धि और वर्तनी आदि का प्राण-प्रण से ध्यान रखना चाहिए । परन्तु जब उसे भाषा ज्ञान के क्षेत्र में उच्चतम प्रतिष्ठा मिल जाए तब उसके द्वारा किए गए अवैयाकरणिक प्रयोग अशुद्ध न होकर नवीन दिशाओं के द्योतक माने जायेंगे । वाल्मीकी, कालिदास, भवभूति, बाण, भास और हिन्दी के कवियों ने भी इस तरह के प्रयोग किये है । सभी राजकीय मुद्राओं और उच्च सरकारी भवनों पर सत्यमेव जयते लिखा जाता है, जब कि व्याकरणिक दृष्टि से वह अशुद्ध है ।” उसका शुद्ध रूप है, 'सत्यमेव जयति 'अथवा ' सत्यमेव विजयते' । इस प्रकार कई बार आर्श प्रयोग चल जाते है । इसी तरह हिन्दी में यदि अंग्रेजी की घाल-मेल होती है और उससे संवेदना को कोई क्षति नहीं होती, तो ऐसे प्रयोग सहज ही ग्रहणीय है ।

संचार माध्यमों के द्वारा सबसे अधिक विज्ञापनों का ही प्रचार-प्रसार किया जाता हैं विज्ञापन मे विगत सालों में सबसे बड़ा बदलाव उसकी भाषा के क्षेत्र में आया है ? विज्ञापन की भाषा पहले की तुलना में ज्यादा रचनात्मक बनी हैं । आदिम शुद्ध भाषा से आगे, मुद्रण केन्द्रित विचारों की ज्ञानात्मक प्रक्रिया से होकर गुजर रही हैं । आज उसमे गली मोहल्ले की भाषा, सिचुएशन अथवा वेसी ही परिस्थितियाँ आ गई हैं । आज उसने भाषिक शुद्धता को उठाकर फेंक दिया है और आत्मनिर्भर भाव से अपने पैरों पर खड़ी है । इस समूचे भाषिक परिवर्तन को लाने का श्रेय दूरदर्शन को जाता है, जिसने गली-बाजार की भाषा को केन्द्र में ला दिया है । ऐसा करके उसने भाषिक शुद्धता के पक्षधर एकायामी दृष्टि से सोचने वाले लकीर के फकीर किस्म के लोगों के लिए गंभीर समस्या पैदा कर दी है । आज जिरा तरह का कम्युनिकेशन पैदा हो गया ह, उसके साथ वे ताल-मेल नहीं बिठा पा रहे हैं । विज्ञापनों ने सम्प्रेषण प्रक्रिया के आधार पर लक्षित श्रोताओं को इस तरह आकर्षित किया है कि वे उसके शब्दजाल में उलझ ही जाते हैं । भूमण्डलीकरण का वाहक बना मीडिया अंग्रेजी शब्दों की भरमार से निर्मित नए किस्म की हिन्दी को प्राथमिकता दे रहा है । इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों चाहे रेडियो हो, टी.वी. हो, या फिल्मे हो, उसमें ऐसी भाषा की आकांक्षा रखना वांछनीय है, जिसमें भाषा व विचारों को शक्तिशाली ढंग से वहन करने की क्षमता हो, जो श्रोताओं और

Impact Factor : 1.9508(UIF)

दर्शकों के अन्तर्मन में गहरे उतरकर उन्हें सुनाए या दिखाए जाने वाले मूल कार्यक्रम की संवेदना तक पहुँचा सके, जो करोड़ों लोगों के दु:ख-दर्द में भागीदारी निभा सके, जो जनता को कई स्तरों पर शिक्षित कर सके, उनका स्वस्थ मनोरंजन कर सके, उनके पास सूचनाओं का निबाण प्रवाह पहुँचा सके, लेकिन इस कोशिश में यदि वह अपनी मौलिकता, अपनी गरिमा खो बैठे तो यह वांढनीय नहीं हो सकता, होना भी नहीं चाहिए ।

संचार क्रांति और सूचना विस्फोट के युग में शक्तिशाली देशों की साम्राज्यवादी भूमिका हमारी भाषा की शक्ति और स्वाभाविकता का हरण कर ले यह स्वीकार्य नहीं है । निर्मल वर्मा ने कहा था – “ बीसवीं सदी के अनुभव ने हमें सिखाया है कि इस भयानक रूप से अधिनायकवादी सत्ताओं के तले, भाषा भ्रष्ट होती है । झूठ और धोखे का जो मैल शब्दों पर जमा होता है, उसकी परतों के नीचे उसकी आध्यात्मिक अर्थवता को पढ़ पाना दूभर हो जाता है । मनुष्य जिस माध्यम से अपनी छवि गढ़ता है, यदि वही संदिग्ध और अविश्वसनीय बन जाए तो वह जीते भी अपनी पहचान खो बैठता है । ” आज तकनीकी वर्चस्व और भूमण्डलीय परिप्रेक्ष्य के दबाव में जनसंचार के इलेक्ट्रानिक माध्यमों ने एक अलग ढंग की हिन्दी विकसित की है जिसका अपना मिजाज है, अपनी अलग चाल है । इस हिन्दी ने एक नया व्याकरण गढ़ा है । नए परिवेश में भाषा की नई चाल-ढाल को ऊपरी तौर पर असंगत नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि संप्रेक्षण की प्रकृति कोई निश्चित सैध्दान्तिक कार्य पध्दति नहीं, बल्कि मनुष्य की क्रियाशील कार्यों और अंतर्प्रेरणओं को समझती हुई निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है । अतः भाषा अपने युग की स्थितियों और प्रेरणाओं के अनुसार बदलती आई है । आज संचार क्रांति, आंकिक (डिजीटल) क्रांति के युग में भी, वह तीव्र गति से बदलाव की ओर बढ़ी है । जनसंचार माध्यमों ने असे व्यापक आधार दिया हैं । इलेक्ट्रानिक मीडिया की भाषा के बदलते स्वभाव को मनोरंजन, सूचना और विज्ञापनों के विश्लेषण से समझा जा सकता है ।

इलेक्ट्रानिक मीडिया में संप्रेषण कार्य मूलतः समाचार, मनोरंजन और मूल्यप्रेषण से संबंधित है । भूमंडलीकरण के सहारे बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने तो वर्चस्व भारत में स्थापित किया है, उससे संचार माध्यमों ने विज्ञापन को संप्रेषण का, प्रचार का महत्वपूर्ण माध्यम बना दिया है । विज्ञापन के जरिये केवल कंपनियों के उत्पादो का प्रचार नहीं हो रहा, बल्कि ये उपभोक्तावादी संस्कृति की जड़ें फैलाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं । ये भी इक्कीसवीं सदी की हिन्दी को 'नवाचार' दे रहे हैं । अतः मीडिया की भाषा में विज्ञापन की भाषा की अहम भूमिका है । दूरदर्शन सहित विभिन्न चैनल्स हिन्दी के समाचार बुलेटिन और अन्य कार्यक्रमों के मध्य में थोड़े-थोड़े सुनिश्चित अंतराल पर व्यावसायिक कंपनियों के विज्ञापन प्रसारित करते है । विदेशी और देशी सभी चैनल हिन्दी के कार्यक्रमों की बाध्यता को बखूबी समझाते हैं । बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भी इस सच्चाई को समझ गई है कि विदेशी माल को हिंदुस्तानी बाजार में फैलाने के लिए हिन्दी जरूरी है । इसलिए उनके विज्ञापन भी हिंदी में होते हैं, लेकिन सर्वथा नए किस्म की हिन्दी में । विज्ञापन के प्रत्येक दृश्य में प्रतीक गुण, परिस्थिति, मूल्य और संदर्भ के प्रयोग से व्यंजित अर्थ की अभिव्यक्ति होती है । उसकी प्रभावोत्पादकता, कॉपी अपील, शब्द संरचना या वाचिक संदेश से बढ़ती है । विज्ञापन की भाशा प्रचार का महत्वपूर्ण हथियार बनती है ।

विज्ञापन को जीवंत और शक्तिशाली बनाने हेतु उसमें दृश्य-बिंबों का प्रस्तुतीकरण, कलात्मक भाषा के साथ किया जाता है । कई बार इससे भाषिक विचलन हो जाते हैं, कभी शब्द नया बनकर निकलता है, तो कभी वाक्य विन्यास में गद्य व्याकरण की जगह कविता की स्वच्छंदता आ जाती हैं और कभी सामान्य बोलचाल की भाषा के दबाव में अंग्रेजी तथा आंचलिक शब्दों के भार से दबी हिन्दी सामने आती है । व्याकरण के अनुशासन को तोड़कर काव्यात्मक स्वरूप में ढलती भाषा के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं –

———— पड़ोसी की जले जान आपनी बड़े शान ।
———— विको वज्रदंती, विको वज्रदंती, आयुर्वेदिक जडी बूडियों को विको ने अपनाया । जो दांतों की रक्षा करें, विको दूथपेस्ट, विको वज्रदंती, विको वज्रदंती ।
———— ताजा माँगो, माजा माँगो ।

कुछ अंग्रेजी के वर्चस्व को ढोते विज्ञापन हैं –

———— धुलाई का हीरों, मैल को कर दे जीरो ।
———— ये दिल मांगे मोर या अहा !
———— नो रूखापन, नो चिपचिपाहट
———— सिम्पलीसिटी में अदभुत शक्ति है । शुक्र हैं, आज की भाग दौंड भरी जिन्दगी में कुछ

तो सिम्पल है ।

संचार माध्यमों में हिन्दी भाषा की प्रकृति

-----	यही हैं राइट च्वाइस बेबी ।
-----	लाईफ हो तो ऐसी ।
-----	खाओ बिट्रानिया फिफटी–फिफटी, व्हेरी–व्हेरी, टेस्टी–टेस्टी ।
-----	आई लव यू रसना ।
-----	मैंगो फूटी, फ्रेश एंड ज्यूसी ।
-----	दांतो में दर्द हैं, नया दूधपेस्ट ट्राई किया ।

हिन्दी में अंग्रेजी या अंग्रेजी में हिन्दी के सम्मिश्रण से तैयार विज्ञापन 'हिन्दी–अंग्रेजी अभिसारी शैली' को प्रस्तुत करते हैं । श्रव्य–दृश्य माध्यमों में शब्द की शक्ति असीम होती है । शब्द बड़ी जल्दी पाठक तक पहुँचकर अर्थ को खोलता है । हिन्दी, अंग्रेजी और बोलचाल के शब्दों का मिश्रण सामान्य जनता ने स्वीकार कर लिया है, किन्तु भाषा के अशिष्ट प्रयोग (कई बार) पचाये नहीं जा सकते । जैसे–तू आदमी है या अंडा, ठंडा मतलब कोकाकोला अथवा तारु, साधारण नमक से लालच मत कर ।

विज्ञापन अपने लक्ष्य की पूर्णता के लिए वस्तु की विशेषता बताने के लिए विशेषणो का सहारा लेता हैं, इसमें उनकी 'कॉपी अपील', उपभोक्ता को क्रय करने की आकांक्षा को जगाती है । जैसे –

एक अनोखे सुविधाजनक टयूब पैक में ।
साफ, स्वस्थ और डेँड्रफ रहित बालों के लिए क्लिनिक शैंपू ।
दूध सी सफेदी निरमा से आए
रंगीन कपडा भी खिल–खिल जाए ।
झंडू पचारिष्ट– पॉच औषधियों वाला टानिक ।
फेयर एंड लवली गोरेपन की क्रीम ।

विज्ञापन में दृश्य की गुणवतता एवं भाषा से व्यंजित होने वाले अर्थ पर विशेष ध्यान दिया जाता है । व्याकरण के खॉंचे में भाषा बैठे या न बैठे लेकिन उसमें ध्यानाकर्षण की शक्ति अवश्य होना चाहिए । मनोरंजन प्रधान कार्यक्रमों में भी संकर (Hybrid) भाषा का प्रयोग किया जाता है । हिंदी धारावाहिक के पात्र अंग्रेजी शब्दों एवं वाक्यों का प्रयोग करते हैं कही यह पात्रों की मांग होती है तो कही बहुराष्ट्रीय कंपनियों की । हिन्दी–अंग्रेजी सम्मिश्रण के साथ उर्दू, आंचलिक एवं स्थानीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग भी युग की मांग के अनुसार किया जाता है ।

फिल्मों पर आधारित कार्यक्रमों में अंग्रेजी का वर्चस्व रहता है मनोरंजन प्रधान कार्यक्रमों में ऐंकर की भाषा तो निराली होती है । इसमें व्याकरण के फ्रेम से बाहर की हिन्दी को अपनाया जाता हैं कुल मिलाकर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में ऐसी हिन्दी को अपनाया जा रहा है, जो विदेशी परिधान में आने मूल स्वरूप को छुपाते हुए आई है, जो अंग्रेजी भाषा के मुहावरों और असके वाक्य विन्यास में अपनी अलग किस्म की की पहचान कराती है । वह बदलाव पात्र, परिस्थिति और काल के कारण नही हैं, यह सूचना विस्फोट और भूमण्डलीकरण की देन है । इलेक्ट्रॉनिक माध्यम का हर शब्द बड़ी तीव्र गति से श्रोता या दर्शक तक पहुँचकर उसे प्रभावित करने की भरपूर शक्ति समेटे रहता है । काव्यात्मकता, पठनीयता, स्वच्छंदता, और विक्रयशीलता पर आधारित विज्ञापनों की छटा मनभावन होती है । विकासात्मक और नवीन दृष्टिकोण लिए विज्ञापन भाषा में नित नवीनताओं का समावेश कर अपनी सृजनात्कता ने चकित कर देते है । जैसे –

“लाईफबॉय हैं जहाँ तंदुरस्ती हैं वहां ।
दमक दमक दम दम्बर, बाबर का बेटा
हुमायूँ, हुमायूँ का अक्बर ।
रिक्हाइटल मैं तो रोज लेता हूँ आप कब ले रहे हैं ।
कर लो दुनिया मुट्ठी में ।
क्या हाल बना रखा है ?कुछ लेते क्यों नही ?कोल्डरिन ली ।
धूम मचा दे रंग जमा दे ।
तन की शक्ति, मन की शक्ति बोर्नविटा ।
जो बीबी से करे प्यार, वो प्रेस्टीज से कैसे करे इनकार ।”

-----	मर्जी है आपकी आखिर सिर है आपका हैलमेट
-----	गणपति बप्पा मोरिया – वन टू का फोर होरिया
-----	सर उठाके पियो – कोकाकोला
-----	पेट्रोल की बचत का अब नया एजेंडा
-----	गणेशोत्सव का नया फंडा – हिरो होंडा ।

वर्तमान में नवीनताओं के अन्तर्गत मोबाईल और इंटरनेट के प्रचार–प्रसार के बाद हिन्दी भाषा के विज्ञापनों का नया रूप विकसित हो रहा है –

-----	Kar lo dunia Muthi Me
-------	-----------------------

Impact Factor : 1.9508(UIF)

-----	Jiyo Jiee bhar ke
-------	-------------------

विज्ञापन में ये भाषाई प्रयोग हिन्दी की लिपि परिवर्तन की सुगबुगाहट को प्रश्रय दे रहे है । आज कम्प्यूटर, इंटरनेट के विराट विश्व में मनुष्य का श्रव्यत्व और दृष्यत्व एकदम यन्त्रवत है, जिसे विश्व के कोने–कोने में सुना और देखा जा सकता है । श्रव्य ओर दृष्य दोनों एक बिन्दुरेखयी हो चुके हैं तथा जिसमें मनुष्यता की लय उत्पन्न करने वाला, मनुष्यता की गूँज पैदा करने वाला शब्द तकनीकी हो चुका हैं । इसमें व्याप्त हवा, गंध, स्पर्श लुप्त है, जिससे अर्थ में ध्वनियों का विध्वंस होने लगा है । नई तकनीक में यान्त्रिक रूप से संचालित होने वाली भाशा का प्रश्न अब केवल मनुष्य की पहचान का प्रश्न नहीं है, वरन इस भूमण्डलीकरण के युग में मनुष्यकता की पहचान का भी प्रश्न है । भाषा और विसंगति की तरह भाषा और उपभोक्ता के प्रपंच का सवाल भी अनिवार्य हो गया हैं, क्योंकि –

शब्द साक्ष्य होते हैं अपने समय के
वे सगूंचे समाज को दर्ज करते हैं अपने में
फिर चाहे कविता हो कि कहानी या
कोई और विधा
शब्द समय के संदर्भ होते हैं !

यह वह संसार है, जहाँ बटन दबाते ही पूरा विश्व घर में सिमट आता हैं, किन्तु उतनी ही तेजी से मनुष्य का अपने से अलगाव भी करता है । मीडिया प्राविधिक, आधुनिक संस्कृति भी उपलब्धियों की देन हैं, किन्तु बाजार और प्रविधि एक नहीं है, भूमंडलीकरण अवश्य इन दोनों की उत्पत्ति हैं यदि भाषा का संकट, संस्कृति का संकट है तो अनेक प्रश्नचिन्ह लग जाते हैं । डॉ. विष्णुकांतशास्त्री और डॉ. नामवरसिंह इसे संस्कृति का संकट से जोडते हैं, तो डॉ. वेद प्रताप वैदिक इसके पक्ष में खडे होकर इसे भाषायी एकता समन्वयक मानते हैं । निश्चित रूप से इंटरनेट ने अपनी चाक्षुशकता (Visuality) एवं वाग्मिता (Orility) से हमारे प्रतिमानों को बदला है । यद्यपि भाषा, साहित्य और संस्कृति मानव मूल्यों से जुडे हैं परन्तु तकनीकी ज्ञान भी प्राप्य विकल्पों में विस्तार द्वारा मूल्यों में परिवर्तन लाता है । जब तक संवेदना है तब तक संवाद है, जिज्ञासा है । जिज्ञासा से ज्ञान तक की यात्रा बिना भाषा के संभव नहीं है । आज भी जब भाषा की एकरूपता, भाषायी सम्प्रेणीयता के प्रश्न हमारे समक्ष हैं, ऐसे में इंटरनेट हमारा सहयोगी है, जटिलता संभवतः केवल यन्त्र की सुलभता और दक्षता ही शेष रहती है, जिसके लिए शिक्षण और आर्थिक सामर्थ्य दोनों की आवश्यकता है । आज हम जहां खडे हैं, वहां से पीछे नही लौटा जा सकता । 'भाषा–साहित्य' दृष्टि तकनीकी ज्ञान को सृजन समन्वित, मूल्य सापेक्ष बना सकती है, उसे दिशावान संकल्प सजग बना सकती हैं, क्योंकि भाषा जीवन है और भाषा की गति में ही जीवन की गति है । निश्चित रूप से अगामी पीढी जिस भाषा और साहित्य से परिचित होगी, वह उसके उस यथार्थ बोध से पूर्ण होगी, जिसमें इलेक्ट्रानिक दृश्य–श्रव्य माध्यम से संयुक्त परिवेश होगा । उसके गत्यात्मक संश्लिष्ट बिम्ब नई ध्वन्यात्मकता से पूर्ण लय, बिम्ब, कल्पना, शब्दों पर इसका प्रभाव होगा जो भाषा को और अधिक यथार्थ ठोस मूर्तरूप दे सकेगा ।

नया मीडिया भ्रमों की सृष्टि करने वाला कोई तकनीकी जादू नहीं है बल्कि इसकी नई भाषा है । इसके पास प्रभावी अभिव्यक्ति की विशिष्ट शक्ति है । भाषा को माध्यम के तौर पर आम लोग लम्बे समय से व्यवहार करते रहे हैं । किन्तु नए मीडिया के आने के बाद इस भाषा की नए सिरे से संहिता बनाई गई । सामूहिक अनुभवों का नए रूप में संहिताकरण हुआ । काम करने की नई आदते जन्मी । सामूहिक जनजागरण की नई संभावनाएँ पैदा हुई । वाचिक शब्द हमारी पहली टेक्नोलॉजी है । उसके उदय के बाद मनुष्य को अपने परिवेश को समझने और नए ढंग से जीवन शुरू करने में मदद मिली । नए मीडिया के विभिन्न रूप हमारे आंतरिक ज्ञान और उपलब्धियों के वाहन मात्र नहीं है । रेडियो और टेलीविजन हमारी भाशण कला और हाव–भाव का इलेक्ट्रीफिकेशन हैं । अभिव्यक्ति के प्रवाह को इलेक्ट्रीफिकेशन तार और वैक्यूम् टयूब सर्किट के जरिए सम्प्रेषित करता है । इस कार्य को वह रूपकों और शब्दों के जरिये सम्पन्न करता है । इन्ही के जरिये वह स्वतंत्रता और उदारता के भाव की सृष्टि करता है ।

मीडिया द्वारा शब्द और अवधारणाओं के मूल अर्थ बदले जा रहे हैं । अब हम जीवों, वस्तुओं, घटनाओं आदि को सही नाम और अवधारणाओं में व्यक्त नही कर रहे हैं । अवधारणाओं की जग रुढियों ने ले ली है । रुढियों में ही हम बातचीत करने लगे हैं । एक तरह से यह रुढियों की वापरसी का युग भी है । धिसे पिटे शब्दों की पुनरावृत्ति आम बात है । शब्दों के वास्तविक अर्थ की जग लोकप्रिय अर्थ स्वीकार किये जा रहे हैं । कृत्रिम और रुढिगत भाशा ने रचना, आलोचना और वक्तृता पर कब्जा जमा लिया है । इस परिवर्तन के कारण अवधारणा और तथ्य के बीच मध्यस्थ की भूमिका अदा करने वाली भाषा की भूमिका भी बदल गई

है । विश्लेषण की जग फार्मूलों से काम चलाया जा रहा है । जनमाध्यमों में रिचुअल्स प्रमुख हो गये हैं । सूचना तकनीक की भाषा अंतर्विरोधों को व्यक्त करने में असमर्थ है। अंतर्विरोधों का भाषाई मेनीपुलेशन के द्वारा हल करने की कोशिश तेज हो गई हैं । संप्रेषण की भूमिका बदल गई है । अब वह भरमाने, लुभाने और सम्मोहित करने का काम करने लगा है। भाषिक संरचना में 'तत्क्षणता और सरलता' पर जोर है । दैवीय या आदिम युगीन धरणाएँ, नाम और इमेजों का प्रयोग बढ़ गया है । संक्षिप्त नामों पर जोर दिया जा रहा है । भाषा में आलोचना का लोप हो गया है । उसकी जगह प्रशंसा ने ले ली है । संशय और भय की भाषा समूचे परिवेश में घुस आई है । 'तत्क्षण पाने', 'सनसनी' और रोमांचकता इन तीन तत्वों के आधार पर भाषा रची जा रही हैं । 'तार्किकता' की जगह निजी अनुभव और भावुकता ने ले ली है ।

इसी तरह विज्ञापनों में 'भाषा की सच्चाई' और 'संदेश की सच्चाई' में अंतर होता है । दर्शक को भ्रम होता है कि वह भाषा की सच्चाई से प्रेरित हो रहा है, जबकि दर्शक को प्रेरित करने वाली शक्ति 'संदेश की सच्चाई' होती है, जो कोडभाषा में व्यक्त होती है । समाचार का चयन सहमति या असहमति के आधार पर होता है । समाचार की भाषा इन दोनों हाइपर माडलों के आधार पर तय होती है । यही से उसका असली अर्थ तय होता है । विज्ञापनों में हाइपर रियलिटी हावी है । इंटरनेट पहले टेक्स्ट आधारित था, आज उसके पास ध्वनि और छवियाँ दोनों हैं । इसने लेखन के चरित्र को भी बदल दिया है । उसके पास हाइपर टेक्स्ट है । वर्ल्ड वाइड वेब एक सिंगल पुस्तक की तरह काम करती है । इंटरनेट साहित्य स्वभावतः ग्लोबल है। इसकी सत्ता राष्ट्र, राज्य, जाति या वर्ग की परिधि को अस्वीकार करती है । इसने पुस्तक और साहित्य की दुनिया पूरी तरह बदल दी है । तथा मैकलुहान की धारणा को पुष्ट करती है कि “माध्यम ही संदेश है ।” अर्थात आज जितने भी इलेक्ट्रानिक माध्यम हैं वे ही सर्वसर्वा हो गए 'सूचना समाज' के । इन माध्यमों ने अपने लिए एक नई हिन्दी बना ली है । इसके लिये उसने अपने सूचना समाज (दशकों) की बहुविधता, बहुराष्ट्रीयता और विश्व स्तर पर हिंदी भाषियों की प्रवासिता एवं स्थानान्तरण को ध्यान में रखा है । किसी व्याकरण के बंधन से रहित एक व्यावहारिक हिंदी इधर तेजी से बनी है । जो अंग्रेजी, मराठी, सिंधी, तमिल या कन्नड आदि के शब्दों के चलन से परहेज नहीं करती । पापुलर राजनीति में वह लालू की हिन्दी है, पापुलर फिल्मों में गोविंदा की हिन्दी है, जो हर तरह से संप्रेषणीयता को अपना नियामक मानती है । मीडिया का काम मूलतः भाषा के प्रतीकों को विनिमित करना होता है । माध्यम के रूप के अनुसार यह विनिमय गति पकड़ता है । प्रिंट माध्यमों में देश और काल, विनिमय को निश्चित करते हैं क्योंकि वे स्थिर होते हैं । उनसे एक निश्चित अर्थ प्राप्त किया जा सकता है । इलेक्ट्रानिक माध्यमों में इस्तेमाल हुए प्रतीक अपने संदर्भों को अस्थिर करते चलते हैं । उनकी तेज गति उनमें अर्थ की ऐसी तेज तरलता भर देती हैं कि पाठक, दर्शक, श्रोता उन्हें अति चंचल गति में तो देख-सुना पाता है लेकिन स्थिर नहीं कर पाता और वह एक हायपर-रियल अर्थात अति चंचल यथार्थ के समक्ष होता है, जो अत्यन्त गतिशील संदर्भ में होने के कारण पकड़ से दूर हो जाता है । इसके एक नहीं अनेक अर्थ हो सकते हैं । इस प्रकार मीडिया एक नया जनक्षेत्र यानी 'नई जनता' बनाता है । यह 'नई जनता' किसी देश विदेश तक सीमित नहीं रहती वरन वह वैश्विक जनता होती है । यह वैश्विक जनता किसी एक भाषा का आग्रह नहीं करती । भाषाई संक्रमण के मीडियाई दौर में वह सम्प्रेषण की भाषा को चुनती है । आज के इस वैश्विक परिदृश्य में माध्यम ही संदेश बनकर उभरता है । शब्द का 'अर्थ' ही माध्यम है । यह बाजारवादी प्रक्रिया से संचलित होने लगता है । इससे भाषा के बंधन टूटने लगते हैं । हिन्दी के साथ ऐसा ही हुआ और वह अपने परम्परागत व्याकरणिक बंधनों से मुक्त होकर उपभोक्ता मांग को पूरी करती हुई वैश्विक होने की दिशा में अग्रसर है ।

Publish Research Article International Level Multidisciplinary Research Journal For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished research paper.Summary of Research Project,Theses,Books and Books Review of publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- ★ International Scientific Journal Consortium Scientific
- ★ OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- EBSCO
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database

Golden Research Thoughts
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.net